IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, May 2024

तलाक : एक सामाजिक और पारिवारिक चुनौती (मुस्लिम महिलाओं के संदर्भ मे)

डॉ गौरव त्रिपाठी
असिo प्रोo ,राजनीति विज्ञान
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुसाफिरखाना, अमेठी, उत्तर प्रदेश

शोध सार

समाज लोगों का एक संगठन है जो सभ्यता पूर्वक जीवन जीने के लिए स्वाभाविक रूप से निर्मित हुआ है। समाज के व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए तथा अराजकता को समाप्त करने के लिए विभिन्न धर्मो और संप्रदायों में विवाह, तलाक ,उत्तराधिकार आदि की व्यवस्था की गई है । विवाह एक नैतिक और सामाजिक व्यवस्था है जिसके बिना इस सृष्टि का सुचारू रूप से संचालन संभव नहीं है। विवाह भौतिक और आध्यात्मिक मिलन के रूप में स्वीकारा जाता है, किंतु कभी-कभी ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाती हैं कि विवाह संस्था का निर्वाहन हो पाना कठिन हो जाता है। इसके लिए इस्लाम में तलाक की व्यवस्था की गई है। इस्लाम में तलाक के तीन प्रकार के बतलाए गए हैं -जिसमें तलाक -ए अहसन को आदर्श तलाक का तरीका माना गया है। इस्लाम में तलाक से पूर्व मध्यस्थता और सलाह की व्यवस्था की गई है। पैगंबर मोहम्मद साहब ने कहा है की पति-पत्नी और बच्चों के बीच मधुर संबंध सदैव रहने चाहिए जिससे व्यक्तित्व और समाज का सही दिशा में विकास हो सके।

मुख्य शब्द ;

तलाक,तलाक ए अहसन, तलाक -ए-शिद्दत, तलाक -ए -बिद्दत ,सुलह , मध्यस्थता, निकाह, पैगंबर ,परिवार ,कुरान, इस्लाम।

प्रस्तावना

समाज की स्थिरता और विकास में परिवार की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विवाह परिवार की स्थापना का आधार माना जाता है। इस्लाम में "निकाह" को केवल धार्मिक परंपरा के रूप में ही नहीं, बल्कि नैतिक

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, May 2024

तथा सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में भी स्वीकार किया गया है। निकाह का मुख्य उद्देश्य एक संतुलित सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है।

इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार पति और पत्नी के बीच प्रेम, सहयोग तथा विश्वास की भावना स्थापित होनी चाहिए। साथ ही सम्मान, सहनशीलता और सहयोग को भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। वैवाहिक जीवन को स्थिर और सुखद बनाए रखने के लिए आपसी समझ, सहनशीलता तथा धैर्य को आवश्यक बताया गया है। फिर भी कुछ परिस्थितियों में पति-पत्नी के बीच मतभेद उत्पन्न हो जाते हैं, जिसके कारण वैवाहिक संबंध को बनाए रखना कठिन हो जाता है। ऐसी स्थिति में इस्लाम तलाक की अनुमति देता है, किंतु इसे एक अप्रिय कार्य के रूप में देखा जाता है और इसे अंतिम विकल्प के रूप में ही स्वीकार करने की सलाह इस्लाम मे दी गई है।[1]

इस्लाम में विवाह की अवधारणा

इस्लाम में निकाह या विवाह को एक पवित्र तथा महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था के रूप में देखा जाता है। पति-पत्नी के संबंध को सुरक्षा और परस्पर सहयोग के संबंध के रूप में वर्णित किया गया है।

कुरआन शरीफ की एक आयत में कहा गया है कि पति और पत्नी एक-दूसरे के लिए "लिबास" के समान हैं। इसका अर्थ यह है कि वे एक-दूसरे की रक्षा करने वाले, सहारा देने वाले और सम्मान बनाए रखने वाले होते हैं।[2] इस्लाम विवाह को केवल शारीरिक संबंध तक सीमित नहीं मानता, किंतु इसे भावनात्मक, सामाजिक और नैतिक जीवन की पूर्णता का माध्यम भी मानता है। परिवार की सुरक्षा और स्थिरता के लिए विवाह को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है।

इस्लाम में तलाक की अवधारणा

पति-पत्नी के वैवाहिक संबंध का विच्छेद तलाक कहलाता है। इस्लाम में तलाक की अवधारणा इसलिए दी गई है कि यदि वैवाहिक संबंध असफल हो जाए और समझौते की संभावना समाप्त हो जाए, तो पति-पत्नी दोनों के लिए सम्मानजनक समाधान उपलब्ध हो सके।

हालाँकि इस्लाम वैवाहिक संबंधों को बनाए रखने के लिए पहले सभी प्रयास करने पर जोर देता है। तलाक को तुरंत लागू करने के स्थान पर सोच-विचार तथा समय देने की प्रक्रिया को प्राथमिकता दी गई है। इस्लामी कानून में तलाक के विभिन्न प्रकार बताए गए हैं—

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, May 2024

1. तलाक-ए-अहसन – इसे तलाक का सबसे आदर्श तरीका माना जाता है। इसमें पति केवल एक बार तलाक देता है और एक निश्चित अवधि तक प्रतीक्षा करता है। इस अवधि के दौरान पति-पत्नी के बीच पुनः मेल-मिलापकी संभावना बनी रहती है।

2. तलाक-ए-हसन – इस प्रक्रिया में तीन चरणों में तलाक दिया जाता है। तीनों चरणों के बीच समय का अंतर होता है, जिससे पति-पत्नी को समझौते और पुनर्विचार का अवसर मिल सके।

3. तलाक-ए-बिद्दत – इस प्रक्रिया में एक ही समय में तीन बार तलाक कहा जाता है। इसे अनुचित और इस्लामी सिद्धांतों के विपरीत माना गया है।[3]

इन व्यवस्थाओं से स्पष्ट समझा जा सकता है कि इस्लाम तलाक को तुरंत लागू करने के पक्ष में नहीं है, बल्कि विचार-विमर्श और सुलह की संभावना को महत्व देता है।

तलाक के कारण

तलाक की स्थिति विभिन्न प्रकार के आर्थिक, सामाजिक तथा व्यक्तिगत कारणों से उत्पन्न हो सकती है। तलाक के कारणों में आर्थिक कठिनाइयाँ, आपसी विश्वास की कमी, विचारों में असमानता तथा पारिवारिक तनाव प्रमुख हैं।

इसके अतिरिक्त वैवाहिक संबंधों में घरेलू हिंसा, पारिवारिक हस्तक्षेप तथा पारिवारिक जिम्मेदारियाँ भी प्रभाव डालती हैं। आधुनिक समय में पारिवारिक संरचना में परिवर्तन के कारण पति-पत्नी के संबंधों में नई चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।

ऐसी परिस्थितियों में इस्लाम तलाक की अनुमति तो देता है, किंतु साथ ही यह भी निर्देश देता है कि पति-पत्नी को धैर्य और समझदारी के साथ अपने मतभेदों को सुलझाने का प्रयास करना चाहिए।[4]

एक हदीस में वर्णन मिलता है कि अल्लाह के निकट हलाल चीजों में तलाक सबसे अधिक नापसंद है। इससे यह समझा जा सकता है कि इस्लाम विवाह संस्था को अत्यधिक महत्व देता है और तलाक को केवल अंतिम समाधान के रूप में स्वीकार करता है।

सुलह और मध्यस्थता की व्यवस्था

तलाक से पहले सुलह का प्रयास करना इस्लाम में अत्यंत आवश्यक माना गया है। कुरआन में निर्देश दिया गया है कि यदि वैवाहिक संबंधों में विवाद उत्पन्न हो जाए, तो दोनों पक्षों की ओर से एक-एक मध्यस्थ नियुक्त किया जाए, जो पति-पत्नी के बीच समझौता कराने का प्रयास करे।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, May 2024

समझौते या सुलह का उद्देश्य वैवाहिक संबंधों को बनाए रखना तथा पति-पत्नी के बीच संबंधों को पुनः स्थापित करना है। यदि दोनों पक्ष ईमानदारी से प्रयास करें, तो कई बार तलाक की स्थिति को टाला भी जा सकता है। इस्लाम यह भी शिक्षा देता है कि पति-पत्नी आपसी समझ, धैर्य और सहनशीलता के साथ अपने संबंधों को मजबूत बनाने का प्रयास करें।[5]

समाज और परिवार पर प्रभाव

तलाक का प्रभाव केवल पति-पत्नी तक सीमित नहीं रहता, बल्कि इसका प्रभाव बच्चों, परिवार और समाज पर भी पड़ता है। विशेष रूप से बच्चों के मानसिक और भावनात्मक विकास पर इसका गहरा प्रभाव पड़ सकता है। समाजशास्त्रियों के अनुसार तलाक की बढ़ती घटनाओं से पारिवारिक संरचना कमजोर हो सकती है। इसलिए समाज और परिवार को ऐसा वातावरण बनाना चाहिए जिसमें पति-पत्नी के बीच संवाद, सहयोग और सम्मान को बढ़ावा दिया जाए। पैगंबर मुहम्मद ने पति-पत्नी के बीच अच्छे व्यवहार और आपसी सहयोग पर विशेष बल दिया है। उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति अपने परिवार के साथ अच्छा व्यवहार करता है, वही सबसे उत्तम व्यक्ति माना जाता है। इस प्रकार इस्लाम वैवाहिक जीवन में प्रेम और सहनशीलता को अत्यधिक महत्व देता है, जिससे तलाक की स्थिति उत्पन्न न हो।[6]

निष्कर्ष:

अतः यह कहा जा सकता है कि इस्लाम में विवाह को एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सम्मानित सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकार किया गया है। तलाक की अनुमति अवश्य दी गई है, लेकिन इसे केवल ऐसी परिस्थितियों में अपनाने की सलाह दी गई है जब वैवाहिक संबंध को बनाए रखना संभव न रह जाए। इस्लाम पति-पत्नी को परस्पर प्रेम, आदर, धैर्य और समझदारी के साथ जीवन व्यतीत करने का मार्गदर्शन देता है।

तलाक की व्यवस्था का उद्देश्य असफल वैवाहिक संबंधों से उत्पन्न कठिनाइयों का समाधान प्रदान करना है। फिर भी इस्लामी शिक्षाओं में पहले आपसी बातचीत, सुलह और समझौते के सभी प्रयास करने पर विशेष बल दिया गया है। यदि परिवार और समाज में आपसी सम्मान, संवाद और सहिष्णुता की भावना को प्रोत्साहित किया जाए, तो तलाक जैसी समस्याओं को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, May 2024

संदर्भ सूची -

1. एस्पोसिटो, जॉन एल. विमेन इन मुस्लिम फैमिली लॉ. द्वितीय संस्करण, सिरैक्यूज़ यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001, पृ. 31।
2. द कुरआन. अनुवाद: अब्दुल्लाह यूसुफ अली, वर्ड्सवर्थ एडिशन्स, 2000, सूरह अल-बक़रह 2:187, पृ. 74।
3. फैयज़ी, आसफ़ ए. ए. आउटलाइन ऑफ़ मुहम्मदन लॉ. पाँचवाँ संस्करण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008, पृ. 145–147।
4. इंजीनियर, असगर अली. द राइट्स ऑफ़ वीमेन इन इस्लाम. स्टर्लिंग पब्लिशर्स, 2004, पृ. 88–90।
5. द कुरआन. अनुवाद: अब्दुल्लाह यूसुफ अली, वर्ड्सवर्थ एडिशन्स, 2000, सूरह अन-निसा 4:35, पृ. 105।
6. अल-बुख़ारी, मुहम्मद इब्न इस्माइल. सहीह अल-बुख़ारी. अनुवाद: मुहम्मद मुहसिन खान, दारुस्सलाम पब्लिकेशन्स, 1997, खंड 7, पृ. 45।